विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा अर्थसहायित लघु शोध परियोजना का शोध सारांश

लघु शोध परियोजना शोध का शीर्षक – 21 वी सदी के प्रथम दशक के नाटकों का अनुशीलन |

संशोधक -डॉ संजयकुमार नंदलाल शर्मा

इस परियोजना के अंतर्गत २१ वी सदी के प्रथम दशक के 26 नाटकों को अध्यनार्थ रखकर उनक मूल्यांकन किया गया है। राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, धार्मिक समस्याओं का चित्रण के साथ ही वर्तमान की समस्यों को बेकारी, भ्रष्टाचार, किसान, आतंकवाद, वृद्धो की समस्याओंका भी चित्रण किया गया है।

२१ वी सदी का प्रथम दशक वैश्वीकरण को साथ लेकर जनमा होने के कारण विभिन्न क्षेत्रो में नई उडान भर रहा है। सुचना प्रौद्योगिकी के बढते प्रभाव के कारण, इंटरनेट, मोबाईल, विभिन्न चैनलो ज्े बढते प्रभाव के कारण नाटक विधा का प्रभाव मंचीयता की दृष्टि से कम होता नजर आ रहा है। सुचना प्रौद्योगिकी ने विचारों में भी बदलाव लाया, नए मूल्य, नई व्यवस्था, नए संस्कार, नई सत्व में नाटक विधा अल्पमात्रा में ही रही है। प्रस्तुत लघु शोध प्रकल्प में २१ वी सदी के प्रथम दशक के हिंदी नाटकों में चित्रीत समस्याएँ ,चेतना को दर्शाने का प्रयास किया गया है। साथ ही मंचीयता की दृष्टि से भी सफलता असफलता पर विचार किया गया है।

`नाटक विधा जनसामान्य में रुचि की विधा रही है। प्राचीन काल से यह विधा निरंतर चलती आयी है यह उसका प्रमाण है। वर्तमान युग वैज्ञानिक के साथ-साथ सूचना और प्रौद्योगिकी युग है। सारी दुनिया को अपनी मुठ्ठी में रखने की शक्ति मनुष्य के भीतर समाहीत हो गई है। इंटरनेट और मोबाईल ने मनुष्य के जीवन में परिवर्तन तो किया है ही साथ ही उसकी सोच को भी बदला है। सूचना क्रांति ने वर्तमान मनुष्य की प्रवृत्ति को संकुचित कर दिया है। गुगल पर सभी प्रकार का ज्ञान सर्च करने पर उपलब्ध होता जा रहा है। वर्तमान परिवेश में मनुष्य के पास समय की कमी है। वह जिंदगी जी नहीं रहा वह उसे हो रहा है। निरंतर भागते रहना जिंदगी का मकसद बन गया है। सामाजिकता, मूल्य, संस्कार, मानवता, प्रेम, अहिंसा, परोपकार, सद्भाव, सहिष्णुता, परदुखकातरता अपनापन आदि उसके जीवन से धीरे-धीरे नदारद होते जा रहे है। इनको निर्माण या स्थापित करने

की शक्ति साहित्य में है। साहित्य जनता को संस्कारित करता है। जनता के विचारों को जगाता है और समस्याओं पर विचार करने के लिए उत्प्रेरित करता है। व इंकलाब नहीं लाता धीरे-धीरे परिवर्तन की मानसिकता निर्मित करता है। किसी भी कलाकार या साहित्यकार की कला या साहित्य तभी संवेदनशील होगी, जब वह समाज के ज्वलंत प्रश्नों पर अपनी दृष्टि फेंकेगा, जीवन की यथार्थता को अपने साहित्य के अंतर्गत निरुपित करेगा। यदि कलाकार इन प्रश्नों से तटस्थ है अथवा उनका मूल्यांकन करने में असमर्थ है तो उसकी कृति समाज के मर्मस्थल को स्पर्श नहीं कर सकती नाटक सशक्त जनवादी कला माध्यम है। अन्य विधाओं की अपेक्षा नाटक ज्यादा से ज्यादा जनजीवन से जुडा रहता है। नाटक समस्त लोगों का होता है। दृश्यात्मकता और श्रव्यात्मकता के कारण नाटक के माध्यम से जन जागरण किया जाता है। अशिक्षित लोग भी इसे आसानी से समझ सकते है। जनता से अलग होकर नाटक का कोई स्वतंत्र आस्तित्व नहीं नाटक सामाजिक साहित्य है। नाटककार, अभिनेता एवं दर्शक, तीनों की सम्यक, समाज चेतना और सामाजिकता के बीना नाट्य रस की सिद्धि संभव नहीं है। नाटक जनता का जनता के लिए जनता द्वारा खेला जाता है।

21 वी सदी के प्रथम दशक के नाटकों में मनुष्य को केंद्र में रखा है। यह युग सूचना प्रौद्योगिकी युग है। मनुष्य ने बहुत ही उॅचाई तक प्रगति की है। पर वह नजदीकी को भूलता जा रहा है। इन नाटककारों ने अपने नाटकों में मनुष्य की समस्याओं का चित्रण किया है। धरती आबा का बीरसा अपने आस्तित्व के लिए संघर्ष करता है। धरती आबा का संघर्ष प्रासंगिक है। आज भी आदिवासीयों पर अन्याय अत्याचार होते दिखाई दे रहा है, उनकी संस्कृति और पर्व, त्योहारों के अस्तित्व पर प्रश्न चिह्न लगा है। नारी संघर्ष और बेटी बचाओ जैसी समस्याओं का चित्रण उठो उहल्या, बटोही, आत्मकथा पाषाणी की, जी जैसी आपकी मर्जी, सावित्री 2007 आदि नाटकों में चित्रण किया गया है। आतंकवाद वर्तमान परिवेश की सबसे भयानक और खतरनाक समस्या बनी है। अधूरा नाटक इस समस्या पर प्रकाश डालता है। वृदधों की समस्या हमारे समाज की गंदी, स्वार्थी मानसिकता की उपज है। इस समस्या की ओर हमें गंभीरता से देखने की आवश्यकता है। त्वमेव माता, त्वमे पिता इस विचार और संस्कार की हमारी संस्कृति में यह गंदे संस्कार कहॉ से आ गए इस पर मंथन होना जरुरी है। हाय हैंडसम का मेजर कपूर इस समस्या का समाधन ढूँढते है। अपने करीयर के पीछे भागने वाले लडकों को माँ-बाप की ओर देखने का समय नहीं मिल रहा है। चार यारों की यार नाटक में अश्लीलता और हैवानियत किस हद तक पहुँच गई है इसे दर्शायां है। अर्जंट मीटिंग में वर्तमान की गंदगी पूर्ण राजनीति का चित्रण है। भ्रष्टाचार शिष्टाचार कैसे बनता जा रहा है, सामान्य मनुष्य का पुलिस द्वारा कैसे शोषण किया जाता है इसे रेल्वे प्लेटफॉर्म में दर्शाया है। बरोजगारी की समस्या चौदह दिन की हवालात में चित्रित की है। किसान को अन्नदाता कहा जाता है। को राजा की भी उपाधि दी जाती है। पर आज इस राजा की स्थिति बडी दयनीय हो गई है। उसे महाजन, साहूकार के साथ कुदरत की ओर से भी मार पडती है जिसके कारण वह आत्महत्या करने के लिए मजबूर हो रहा है। कर्ज के चंगुल से उसका छुटकारा नहीं हो पा रहा है। खेती से सोना उगाने वाला किसान कर्ज में डूबा जा रहा है।

वर्तमान समय में नारी आर्थिक दृष्टि से स्वयं संपन्न है पर फिर भी उसकी अवस्था दयनीय है। नौकरी करने के बावजूद भी उसका स्थान दूसरे क्रमांक पर ही है- "दफ्तर और परिवार दो पाटों के बीच में पिसती रही। पति और सास के अत्याचारों से जरुर बची, पर क्या सुख-शांति मिली? बिलकुल नहीं मिली। जिन्दगी मशीन बनकर रह गयी। दफ्तर के भूखे भेडियों से अपने को बचाना कितना मुश्किल होता है? मैं इसे जानती हूँ- मैंने वह संत्रास भोगा है। ये भेडिये स्त्री की मजबूरी का फायदा उठाना चाहते है। उनके अनुसार न चलो, तो परेशान करेंगे। एक्सप्लेनेशन कॉल करेंगे। सर्विस करना मुश्किल कर देंगे। हाँ, जो स्त्रियाँ प्रैक्टिकल होती है, वे इन भेडियों से अपना माँस नोचवाती रहती है और प्रिविलेज लेती रहती है। उन्हें काम भी अधिक नहीं करना पडता वे ऑफिस की शो-पीस होती है।" नारी के ऑसूओं की कद्र किसी ने नहीं की। या तो उसे इतना उँचा स्थान दे दिया जिससे वह पूजनीय बना दी गई, या फिर उसे केवल भोग की वस्तू समझकर तुच्छ माना गया किसी ने उसें इन्सान की नजर से नहीं देखा। करमी इस भाव को व्यक्त करते हुए कहती है- "तू नहीं समझेगा। तू भी तो मरद है। और कोई मरद आज तक औरत का रोना-हँसना कुछ भी नहीं बूझ पाया। मैं भगवान के लिए नहीं, अपने बेटे के लिए रो रही हूँ।"

आतंकवाद की समस्या केवल भारत की नहीं है अपितु यह विश्व की समस्या है। इस आतंकवाद के कारण कई निरपराध, मासूमों को अपनी जिंदगी से हाथ धोना पडा है। आतंक का दूसरा नाम विध्वंस, बरबादी है। आतंकवाद ने दुनिया को एक ऐसी जगह लाकर खडा कर दिया है, जिसमें कुछ भी हो सकता है। आज मानव सभ्यता गहरे संकट में है। डॉ. राजेंद्र मिश्र ने तो आतंकवाद को कथा सूत्र का मुख्य बिंदु मानकर ही अधूरा नाटक का सृजन किया है। शहर फुलते और फैलते जा रहे है क्योंकि हर कोई गौव से शहर की ओर भाग रहा है। शहरों की चक्का चौंध उसे आकर्षीत करती है। रोजगार पाने की लालसा के कारण शहरों में बसने वाले लोगों की स्थिति बडी दयनीय है। अपने गॉव में बडे मकान में रहनेवाला व्यक्ति शहरों में झुग्गीयों में, नाले के किनारे, रेल की पटरी के पास, गंदगी युक्त वातावरण में रहने के लिए विवश हुआ है, फिर भी वह शहर की ओर ही भागता जा रहा है। नौबहारसिंह कहते है- "भीड तो हो ही जानी है। जैसे-जैसे जनसंख्या बढती है वैसे-वैसे बेरोजगारी भी बढती है और जब बेरोजगारी बढती है तो बेकार लोग रोजगार की तलाश में नगरों-महानगरों की तरफ लपकते है।"

वृद्धों का स्थान परिवार में बडा महत्वपूर्ण होता है। वे संस्कारों का विश्वविद्यालय होते है। अनुभवों का खजाना का वे मालिक होते है। वे विशाल बरगद की भॉति होते है। पर वर्तमान समय में वृद्धों की स्थिति बडी दयनीय होती जा रही। उनकी उपेक्षा की जाती है। फालतू समझा जाता है। वे परिवार में रहकर अकेलापन महसूस करते है। हाय हैंडसम के कर्नल कपूर की यही स्थिति हो रही थी। बेटे बहु के बीच के संबंध को देखकर वे बहुत ही अकेलापन महसूस करते है। पर कर्नल कपूर अपनी ही समधन से विवाह कर लेते है।

अभिनय नाटक का महत्त्वपूर्ण तत्व है तथा यह अभिनेता द्वारा सम्पन्न होता है। अभिनय और अभि नेयता अन्योन्याश्रित है। एक व्यक्ति लोगों की भीड को सम्बोधित करते हुए कुछ कहता है तो वह नाटक

नहीं होता किन्तु वही व्यक्ति जन विशिष्ट उद्देश्य से अपने स्वर में कोई भाव उत्पन्न करता है तो वह नाटक बन जाता है। इस भाव में ही नाटकीयता के तत्व है। यह नाटकीयता स्वर विशिष्टता और उतार-चढाव के अतिरिक्त वेशभूषा, रुप-सज्जा, भाव-भंगिमा आदि से उपलब्ध होती है जो कि अभिनेता के साधारण सम्बोधन को नाटक का रुप देते है। अभिनय नाटक का प्राण है और उसके बिना नाटक में सजीवता आ ही नहीं सकती। "नाट्यशाला का केन्द्रबिन्दु रंगमंच है तो रंगमंच का केन्द्रबिन्दु अभिनेता है, अभिनय नाटक का अनिवार्य अंग है।"

नाटक की भाषा ही नाटककार के उद्देश्य या विचार को दर्शकों तथा पाठकों तक संप्रेषित करने का महनीय कार्य करती है। प्रत्येक विधा की अपने स्वरुप के अनुसार एक विशिष्ट अभिव्यंजना शैली होती है। नाटक चूंकि स्वयं में अन्य विधाओं की तुलना में कथावस्तु और पात्रयोजना के स्तर पर एक अतिरिक्त सावधान विधा है, इसलिए इसकी सारी सावधानी इसकी भाषा-शैली पर निर्भर करती है। नाटक की भाषा-शैली का सम्बन्ध इसके वाचक अभिनय से है जो संवादों के माध्यम से मुखरित होता है। नाटककार के लिए आवश्यक है कि वह अपने शब्द-चयन में बहुत सतर्कता बरते और अपने शब्दायोजन में निरन्तर नाटकीयता का ध्यान रखे। कई बार सुनने को मिलता है कि अमुक नाटककार ने अपने संवादों को कई-कई बार तराशा है। यह तराश और कुछ नही वास्तव में भाषा-शैली द्वारा नाटक की चेतना की पूर्ण अभिव्यंजना का प्रयास है। धरती आबा नाटक की भाषा पात्रानुकुल है। नाटककार ने सीधी-सरल भाषा का प्रयोग किया है जो अभिनेयता की दृष्टि से भी सुयोग्य है। श्रोताओं को सहज ही आकलन हो सकती है। ऐसी भाषा का प्रयोग किया है। बिरसा की भाषा में विश्वास, ठोसपन, छटपटाहट, आक्रोश, अन्याय के विरुद्ध बुलंद आवाज की झलक दिखाई देती है- "कभी मिलता है और कभी नहीं भी मिलता। कभी इनके जवाब समझ पाता हूँ और कभी कुछ भी नहीं समझ पाता। जाने क्यों बार-बार मेरे भीतर बहुत तेज आँधी की तरह कुछ उइता है और मैं उडने लगता हूँ। मेरा खून बहुत चंचल हो गया है। बहुत जोर-जोर से बहता है मेरे भीतर।

संगीत, नृत्य, चित्र, मूर्ति, स्थापत्य आदि विभिन्न कलाएं है, किन्तु जब नाट्य में उनका उपयोग होता है तो वे उसीकी अपेक्षाएं पूरी करती है नाट्य उनका उपयाग वस्तु या सामग्री की तरह करता है और उन्हें इस तरह गुम्पित करता है कि उनका उपना अलग-सा अस्तित्व नहीं रहा जाता है। वह एक ऐसी अन्विति पैदा करता है जो उपादेय की तुलना में उपादान को पीछे छोड जाती है। नाट्य शब्द, कार्य, संगीत, नृत्य, चित्र, अभिनय, सज्जा आदि विभिन्न कलात्मक माध्यमों से कई रुपों में अपील करता है, किन्तु सबका प्रभाव एक ही होता है। नाट्य के विभिन्न अंगो, कलाओं और शिल्पों के बीच एक आंगिक और संवेदनात्मक अन्विति के कारण सहज रिश्ता होता है। इसी के कारण रंगमंच उन सबसे सामर्थ्य ग्रहण कर अदभुत शक्ति अर्जित करता है।" 21 वी सदी के प्रथम दशक के नाटकों का नाट्यशिल्प तथ रंगमीचयता की द्वष्टि से मूल्यांकन ज़ि या गया है।

एक औरत नाटक में हमारे देश में बदलते मानवीय मूल्यों से उत्पन्न गंभीर समस्या को दर्शाया है। हमारा आदर्श, हमारे प्रेरणा स्त्रोत, हमारे मार्गदर्शक कैसे और कौन होने चाहिए इसकी ओर नई पीढी

गंभीरता से नहीं सोच रही है। दिखावा, चक्का चौंध को ही सर्वस्व माना जा रहा है। पश्चीमी विचारों का अंधानुकरण किया जा रहा है। मनीष संशोधक है उसके आदर्श भारतीय संस्कृति के पोषक है। वह मानवता, मनुष्य और भारतीय मानवीय मूल्यों में विश्वास रखनेवाला है। वह सुगंधरा से कहता है- "एक सकून, कि मैंने मानवता को दुख से मुक्त करने के लिए संपूर्ण जीवन लगा दिया है। मेरा यह अनुसंधान किसी राष्ट्र या धर्म विशेष की सीमाओं में न बँधकर समस्त मनुष्य-जाति की भलाई के लिए होगा। क्या यह थोडी उपलब्धि है?सुगंधरा आज की नई पीढी का प्रतिक है जो बदले हुए मानवीय मूल्यों, उनके विचारों में ही विश्वास रखती है। पर उनके परिणामों को वे नहीं जानते। प्रधानाचार्य और विंध्या पश्चिमी विचारों में विश्वास रखनेवाले है। उनके जीवन का उदेश्य केवल भोगवाद है। मनीष और नारंग भारतीय संस्कृति के प्रतीक है।

राखी का ऋण इस नाटक में समाज से वंचित पर समाज की सेवा करनेवाली वेश्या की व्यथा की कथा है। वेश्या की वेदना को दर्शाना इस नाटक का उदेश्य है। विधु जो नाटक के अंत में विजय से कहती है वह इस नाटक का प्राण है, नाटककार का संदेश है साथ ही नाटक के शीर्षक की सार्थकता भी है। इस नाटक की मुख्य पात्र अदृश्य है जो विधु की मॉ है, वह वेश्या है और अपनी बेटी विधु को कोठा संस्कृति से दूर रखना चाहती है। वह अपनी बेटी को सभ्य समाज का अंग बनाना चाहती है। दिशा जैसी संस्थाएँ समाज सुधर का काम करती है। परंतु कोतवाल जैसे रिश्वतखोर पुलिस अफसर जो समाज का कोढ है, असल में ऐसे लोग ही समाज की गंदगी है, ये ही लोग समाज को बिगाडने का, गंदा करने का काम करते है। कोतवाल अगर चाहते तो विधु का जीवन बदल सकते थे। पर वे ऐसा नहीं कर पाए।आत्मकथा पाषाणी की, नाटक एक पात्री है। इस नाटक का मुख्य कथ्य नारी जीवन की पीडा को दर्शाना है। आदिम काल से लेकर आज तक नारी की क्या दशा और दिशा रही है इसे दर्शाया है। इसमें नारी संत्रास तथा नारी की व्यथा की कथा है। प्रारंभिक काल से लेकर आज तक की नारी की मन स्थितियों का चित्रण है। यह आत्मकथा नारी की है, सामान्य नारी की है। उसकी व्यथा की यह कथा है पर कोई उसे ध्यान से नहीं सुन रहा है। वह दर्शकों से कहती है- "आप आये हैं मेरी आत्मकथा सुनने। मैं जानती हूँ मेरे दुख से आपका कोई लेना-देना नहीं है। यदि होता, तो मुझे दुख ही क्यों होता आप मनोरंजन के लिये मेरी आत्मकथा सुनने आये हैं पर मैं आपका मनोरंजन कैसे कर पाऊँगी मुझे जीवन में कभी मनोरंजन मिला ही नहीं। जो मिला है, वही आपको दे सकती हूँ।

एक था महामंत्री इस नाटक की कथावस्तु के केंद्र में महामंत्री चाणक्य है। इस नाटक में चाणक्य के व्यक्तित्व के गुणों पर प्रकाश डाला गया है। वे सच्चे महामंत्री थे। जनसेवा ही उनके जीवन का लक्ष्य था। चाणक्य का व्यक्तित्व आज प्रासंगिक है। भ्रष्टाचार, स्वार्थ, भाई-भतीजावाद, परिवारवाद, दल बदलू वर्तमान समय के राजनीति में सक्रीय मंत्रीयों को चाणक्य से सीख लेनी चाहिए। निस्वार्थ भाव व जनसेवा ही सर्वोपरी यह बात यदि चाणक्य की आज के मंत्री आत्मसात कर ले तो भारत की जनतंत्र प्रणाली का विश्वभर में

और भी उँचा स्थान हो जाएगा। चाणक्य कर्तव्य परायण है। आज के मंत्रीयों का चरित्रिक पतन और महामंत्री चाणक्य का चरित्र इनमें जमीन आसमान का अंतर है।

चौदह दिन की हवालात इनमें सम्मिलित सभी नाटक ऐसे हैं, जिन्हें सुव्यवस्थित मंच के बिना भी सीधे जनता के साथ जोडा जा सकता है। आज भी जनसमस्याओं का कोई और-छोर नहीं है अभाव, महँगाई, बेरोजगारी, बढती हुई जनसंख्या, प्रशासनिक एवं राजनीतिक भ्रष्टाचार, प्रदूषण आदि कितनी ही ऐसी समस्याएँ हैं, जो सीधी जन-जीवन से जुडी हैं और ऐसे में नुक्कड नाटक ही ऐसी सशक्त विधा है, जो जनसाधारण को गहराई से और सीधे-सीधे अपने साथ जोड सकती है।"

इस नाटक में नाटककार ने मजदूरों की समस्याएँ, बेरोजगारी की समस्या, भ्रष्टाचार की समस्या आदि का चित्रण किया है।नाटककार ने सत्यवान, सावित्री यमदुत और यमराज इन पात्रों के माध्यम से वर्तमान स्थिति को दर्शाया है। पुलिस, सरकारी दफ्तर पद, प्रतिष्ठा, संपत्ति भ्रष्टाचार और नारी की समाज मे स्थिति आदि को चित्रित किया है। नाटककार ने सरकारी दफ्तरों में कामकाज किस तरह चलता है, फाइले कैसे गायब होती है। कैसी जान बुझकर गलतीयॉ की जाती है।निर्देशक अभिजित कुमार का मानना है कि तब भी सावित्री किसी भी तरह पति के प्राणों की वापसी चाहती थी और आज भी चाहती हे, मगर तब संदर्भ और विषय और थे, आज और है। तब मन और प्राण सत्य हुआ करते थे आज पद, प्रतिष्ठा और प्रॉस्प्रेरटी अधक सत्य लगते है। तब वो अपने होने का एहसास पति के माध्यम से अनुभव करती थी, मगर आज उसे पति से अलग न केवल अपने स्वतंत्र अस्तित्व, पहचान अतिरिक्त सत्ता की तलाश और निर्णय लेने की स्वतंत्रता की आवश्यकता है अपितु आज जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अधिकार, कर्तव्य, इच्छा, अपेक्षाएँ और आकांक्षाओं को लेकर उसकी अपनी एक स्वतंत्र सोच भी है।2007 की सावित्री यमराज के चंगुल से जायदाद के लिए दो दिनों के लिए क्यों न हो पर सत्यवान के प्राण वापस ले आती है वह यमराज से कहती है- बस केवल दो दिन। इतने से मेरा काम चल जाएगा। इन दो दिनों में अपने पति से बाकी बची जायदाद अपने नाम लिखा लूँगी महाराज। मेरी छोटी बहिनें अभी क्वॉरी बैठी है। मैं नही चाहती कि वे दोनों भी मेरी तरह इस अंधे प्रारब्ध की चपेट में आ जाएँ। इस प्राप्त धन से मैं उनके मस्तकों को सूर्य की भॉति चमकाने का प्रयास करुँगी महाराज। सावित्री सत्यवान की चौथी पत्नी है और वह संपत्ती के लिए अपने पति के प्राण यमराज से दो दिन के लिए लाती है। पुराण कालीन सावित्री और 2007 की सावित्री की सोच में क्या अंतर यह दर्शाया गया है।

जी जैसी आपकी मर्जी प्रस्तुत नाटक में लेखिका ने नारी की वर्तमान दशा को दर्शाया है। इस नाटक के संदर्भ मे टिप्पणी करते हुए लेखिका कहती "पौराणिक जमाने से ही स्त्री को रौंदा जाता रहा है। उसके व्यवहार पर प्रश्नचिन्ह लगाये जाते है। उसे आलोचनाओं का शिकार होना पडता है, उसे विभिन्न प्रकार की प्रताडनाएँ दी जाती है। आज के समाज में भी स्त्री स्वतंत्रता और अपने फैसले खुद लेने का हक आज भी ज्यादातर

स्त्रियों के लिए एक दूर से लिखने वाला सपना मात्र ही है। उपरोक्त समस्याओं से हमारा पूरा समाज भलीभॉति परिचित है लेकिन फिर भी इसे अनदेखा कर दिया जाता है या इसे बिना प्रश्न किये स्वीकार कर लिया जाता है।

ये नाटक नारी मुक्ति आंदोलन से कही ज्यादा बडा है। ऐसा नहीं कि हम उस आंदोलन के विरुद्ध है लेकिन ऐसे बहुत से रुढिवादी मुद्दे है जिन्हें हमे देखना और बदलना होगा। अपने समाज में स्त्री की स्थिति में सकारात्मक परिवर्तन लाने के लिए ये नाटक कोई सनसनी पैदा करने के लिए नही बल्कि जो हमारे बहुत से सामाजिक और राजनीतिक मुद्दे इस स्थिति से जुडे है उन पर प्रकाश डालने की एक कोशिश, एक पहल है। पोटे साहेब को लडका नही है केवल तीन लडकियॉ है उनकी बीमारी को लेकर रिश्तेदार हमदर्दी जताते है तब वर्षा कहती है- "अरे लडका होता तो क्या पेट फाड के टयूमर अपने हाथ से निकाल देता? मैं मानती हूँ कि लडका होता तो दौडभाग करता तो क्या हम लोग दौडभाग नहीं कर सकती। अरे आप लोग हमारे ऊपर विश्वास करेंगे तभी तो हम कुछ कर सकेंगे ना।"

उठो अहल्या इस नाटक में नाटककार ने पुरुष वर्चस्व के विरुद्ध स्त्री का तीव्र स्वर मुखरीत किया है। अहल्या की प्रख्यात कथा को आधार बनाकर नाटककार ने नारी की वेदना को मुखरित किया है। इस नाटक की कथावस्तु भलेही पौराणिक है पर वह प्रासंगिक है। यह व्यथा उस समय की नारी की नहीं है अपितुं आज की नारी की भी है। इन समस्याओं से, अतयाचारों से, अन्याय से लडने की शक्ति स्वयं नारी को अपने भीतर निर्माण करती है। उसे पाषाण नहीं बनना है, जागृत होना है, उठना है।

राजेंद्र मिश्रजी नाटक है- अधूरा नाटक। मिश्रजी ने इस नाटक की कथावस्तु केंद्र में आधुनिक मनुष्य को रखा है। जिसकी जिंदगी की व्यथा को कथा के रुप में चित्रित किया है। दुनिया में आज सबसे खतरनाक यदि कोई है तो वह है- आतंकवाद आतंकका कोई मजहब, जाति नहीं होती। स्वार्थ के लिए या दहशत निर्माण करने के लिए तहस-नहस करना हिंसा करना यह आतंकवाद का उद्देश्य होता है। इन्ही आतंकवादीयों की हिंसात्मक प्रवृत्ती के कारण न जाने कितने निरपराध लोगों की, मासूमों की बलि चढाई जाती है। बिना किसी वजह से इन मासूमों को अपनी जान से हाथ धोना पडता है। उन व्यक्तियों के जाने के बाद परिवार को भावनात्मक स्तर पर बहुत पीडा, दर्द होता है। उस हादसे के सदमें से बाहर निकलना बडा कठिन होता है। इस नाटक की कथावस्तु का नाटककार यही उदेश्य है कि आतंक का साया हर और फैल रहा है। पूरा देश इसकी गिरफ्त में है। विस्फोट में असमय मरनेवाले के साथ उन लोगों की जिंदगी की एक गहरी त्रासदी शुरु हो जाती है जो जीवित रह जाते है। भूमिका में नाटककार लिखते है- "बाहरी आतंक के साथ एक भीतर का आतंक भी है। व्यक्ति बिखर रहा है, समाज टूट रहा है। आज नाटक में ही यह रचा जा सकता है।अधूरा नाटक में जीवन की सच्चाई के साथ आतंकवाद के दुष्परिणाम को दर्शाया है। आतंकवाद दुनिया के लिए सिर दर्द बना है। नाटककार ने इस नाटक में आतंकवाद के लिए खिलाफ लडने के लिए सभी का एक होना जरुरी माना है। शासन, प्रशासन, नागरिक यदि एक हो जाए तो

आतंकवाद को नश्ट करना नामुमकीन नहीं है। आंतराष्ट्रीय स्तर से भी सभी राष्ट्र मिलकर मुकाबला करेंगे तो निश्चय ही आतंकवाद का खात्मा हो जाएगा।

धरती आबा इस नाटक की कथावस्तु का केंद्र बिंदू बीरखा मुंडा का जीवन रहा है। बिरसा जनजातिय समाज के ही नायक नहीं है अपितु पूरे भारतीय समाज के नायक है, पूरे भारतीय समाज का नेतृत्व बिरसा ने किया है। बिरसा ने मुंडाओं में चेतना फूँकने का काम किया है। गुलामी के बंधनों से मुक्त करने का संघर्ष इस नाटक में चित्रित है। संगठन शक्ति समाज के लिए कितनी महत्वपूर्ण है, संगठन की ताकद के सामने बडी से बडी शक्ति भी झुक जाती हे इसे दर्शाया है। बिरसा नई सामाजिक, व्यवस्था के लिए लडते है। अंग्रेजों की वासना से मुक्ति के लिए लडते है, आजादी के लिए लडते है। बिरसा स्वाभीमानी है। बिरसा ऐसे धर्म की स्थापना करना चाहते है जो भयमुक्त हो, जहॉ विश्वास हो, उसकी बुनियाद में मनुष्य हो। बिरसा, कर्मकांडों में विश्वास नही रखते।

अर्जंट मीटिंग इस नाटक में नाटककार ने कला जगत में राजनीति की घुसपैठ हो जाने के कारण सच्ची कला और सच्चे कलाकारों को उपेक्षित कैसे रखा जाता है इसे दर्शाया है। राजनीति और भाई-भतीजावाद का चोली दामन का रिश्ता रहा है। वही रिश्ता कला के क्षेत्र में घुसपैठ कर कला और कलाकार का गला दबाने का प्रयास कर रहा है। सरकारी दफ्तरों में, तथा सरकार के अधीनस्थ संस्थाओं में मिटींगे ली जाती है। मिटींगों के दरमियान किसी विषय को लेकर बडा मंथन होता है, बहस होती है, सखोल चर्चाऍं भी होती है पर आखिर फैसला राजनीति ही लेती है। अर्जंट मिटींग नाटक की कथावस्तु भी इसी पर आधारीत है। साहित्य, कला किसी के हाथों की कठपुतली नहीं होती। उनका अपना अलग विश्व होता है। पर आज उसमें राजनीति के प्रवेश के कारण खींचतान, बंदरबॉट, पार्टीबाजी होते हुए दिखाई दे रही है। यह नाटक रंग जगत के अंतरंग को दर्शाता है।

हाय! हैंडसम नाटक के मूल में आज की एक ज्वलंत संवेदनशील और महत्त्वपूर्ण समस्या है। विखण्डित छोटे परिवारों में स्वयं को लगातार फ़ालतू, उपेक्षित और नितांत अकेला महसूस करने और एक अभिशप्त जीवन जीते रहने को विवश वृद्ध माँ-बाप। यह स्थिति और भी असह्य और त्रासद हो जोती है, जब दुर्भाग्य से इनमें से कोई एक बचा रह जाता है। वृद्धाश्रमों में आतुरता से मौत का इन्तजार करते बूढों की स्थिति तो और भी दयनीय है। बच्चों के विदेश चले जाने के कारण अकेले रह गये या बच्चों के निजी जीवन में उनके गले की हड्डी बनकर ज़बरदस्ती साथ रहकर दिन-रात उनकी अवलेहना और डाँट-फटकार देखने-सुनने और महसूस करने के बावजूद वहीं रहने को मजबूर वृद्धों की विकल्पहीन दशा तो और भी दुखद है। न साथ रहना सम्भव है और न अकेले रह पाना। आपको हैरानी होगी यह जानकर कि बिना जीवन के सिर्फ ज़िन्दा-भर रहने और मृत्यु को मुक्ति का साधन मानकर उसकी आतुर प्रतीक्षा करने वाले ऐसे वृद्धों की संख्या भारतवर्ष में इस समय अनुमानत: छह करोड़, उन्नीस लाख, पचपन हज़ार, नौ सौ पचास है। यह संख्या दिन दूनी, रात चौगुनी रफ्तार से आगे बढ़

रही है।इस नाटक की कथावस्तु में वृद्ध विमर्श को चित्रित किया है। वर्ममान में वृद्धाश्रमों की संख्या बढना समाज के लिए चिंतन का विषय है। परिवार का निखरना टूटना सामाजिक संतुलन को नष्ट करता है।

21 वी सदी का प्रथम दशक भले ही सूचना प्रौद्योगिकी रहा हो परंतु नाटककारों ने अपने नाटकों के माध्यम से मनुष्य सामाजिक मूल्य, संस्कार, आतंकवाद, वृद्धवस्था, नारी समस्या, राजनीति, भ्रष्टाचार, बेकारी आदि का चित्रण किया है। वैसे भी मात्र पढी हुई बात की अपेक्षा ऑख से देखी हुई और कान से सुनी हुई बात का प्रभाव अधिक रहता है। नाटक का उद्देश्य मनोरंजन से ही पुर्ण नही हो जाता लोकरंजन के साथ-साथ इसमें लोक संग्रह अथवा लोक कल्याण की भी क्षमता रहती है। साहित्य की सभी विधाओं में नाटक ही ऐसी विधा है। जिसका जन जीवन से सीधा संबंध है।21 वी सदी के प्रथम दशक के लगभग सभी नाटकों का मंचन हुआ है। नाट्य मंडळी के द्वारा अभिनीत इन नाटकों के अभिनय की सराहना श्रांताओं ने की है। इनका मंचन करने वाले सभी अभिनेता, कलाकार अनुभवी होने के कारण अभिनंयता की दृष्टि से ये नाटक सफल रहे है। इन में से कुछ नाटकों में मंचन की तस्वीर दी गई है, जिन्हें देखकर हम निश्चित तौर पर कह सकते है कि अभिनेयता की दृष्टि से 21 वी सदी के प्रथम दशक के नाटक सफल रहे है।